इकाई 20 संस्कृत अनुच्छेद का हिन्दी में अनुवाद कादम्बरी (शुकनासोपदेश मात्र)

इकाई की रूप रेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 गद्य भाग संस्कृत अनुच्छेद का हिन्दी में अनुवाद कादम्बरी (शुकनासोपदेश मात्र)

20.3 सारांश

20.4 कुछ उपयोगी पुस्तकें

20.5 अभ्यास प्रश्न

20.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप संस्कृत अनुच्छेद का हिन्दी में अनुवाद कादम्बरी (शुकनासोपदेश मात्र) की महत्त्वपूर्ण बातों का अध्ययन करेंगे। अध्ययन के पश्चात आपः

- शुकनास के विषय में आप जानेंगे।
- युवावस्था का अन्धकार अत्यन्त गहन होता है, इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे।
- सेवकों द्वारा अपनी नकल किये जाने पर राजा कैसे प्रसन्न होते हैं, इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे।
- विषयसुख तुम्हें कुमार्ग में न ले जाये इसके विषय में आप जानकारी प्राप्त करेंगे।

20.1 प्रस्तावना

अनुवाद एवं निबन्ध लेखन से सम्बन्धित खण्ड छः की बीसवी इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि चन्द्रापीड कौन था? राजा ने चन्द्रापीड को युवराज के पद पर अभिषेक करने की इच्छा से द्वारपालों को सामग्रियों का समूह एकत्र करने के लिए आदेश दिया। उस चन्द्रापीड को, जिसका युवराज पद पर अभिषेक का समय निकट था, कभी मिलने के लिए आने पर विनय से परिपूर्ण होने पर भी उसे और अधिक विनम्र बनाने की इच्छा से शुकनास ने विस्तार से उपदेश दिया अभिषेक के बाद दिग्विजय प्रारम्भ कर चारों ओर भ्रमण करते हुए अपने पिता द्वारा जीती गयी भी सात द्वीपों के अलंकार वाली इस धनधान्य सम्पन्ना पृथ्वी को फिर से अपने अधीन किया।

20.2 गद्य भाग संस्कृत अनुच्छेद का हिन्दी में अनुवाद कादम्बरी (शुकनासोपदेश मात्र)

कादम्बरी शुकनासोपदेशः

एवं समतिक्रामत्सु केषुचित् दिवसेषु, राजा चन्द्रापीडस्य यौवराज्याभिषेकं चिकीर्षुः प्रतीहारानुपकरण–सम्भारसंग्रहार्थमादिदेश। समुपस्थितयौवराज्याभिषेकं

च तं कदाचिद् दर्शनार्थमागतमारूढ़विनयमपि विनीततरमिच्छन्शुकनासः; सविस्तरमुवाच–

तात चन्द्रापीड! विदितवेदितव्यस्य अधीतसर्वशास्त्रस्य ते नाल्पमप्युपदेष्टव्यमस्ति। केवलं च निसर्गत एव अभानुभेद्यम अरत्नालोकच्छेद्यम अप्रदीपप्रभापनेयम अतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्। अपरिणामोपशमो दारुणो लक्ष्मीमदः।

हिन्दी भावार्थ – इस प्रकार कुछ दिनों के बीतने पर राजा ने चन्द्रापीड का युवराज के पद पर अभिषेक करने की इच्छा से द्वारपालों को सामग्रियों का समूह एकत्र करने के लिए आदेश दिया। उस चन्द्रापीड को, जिसका युवराज पद पर अभिषेक का समय निकट था, कभी मिलने के लिए आने पर विनय से परिपूर्ण होने पर भी उसे और अधिक विनम्र बनानेकी इच्छा से शुकनास ने विस्तार से कहा–

प्रिय चन्द्रापीड! जानने योग्य सभी विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लेने वाले और सभी शास्त्रों का अध्ययन कर चुके आपके लिए उपदेश देने योग्य कुछ भी नहीं है। केवल यही कहना है कि स्वभाव से यौवन में उत्पन्न (अज्ञानरूपी) अन्धकार अत्यन्त गहन होता है, जो सूर्य द्वारा दूर नहीं किया जा सकता है, रत्नों के प्रकाश से नष्ट नहीं किया जा सकता, दीपक की ज्योति से हटाया नहीं जा सकता। (मद्यपान का नशा तो परिणाम अर्थात् पचकर उतर जाता है किन्तु) धनसम्पत्ति से उत्पन्न नशा परिणाम अर्थात् वृद्धावस्था होने पर भी नहीं उतरता।

कष्टमनञ्जन–वर्ति–साध्यम अपरमैश्वर्य–तिमिरान्धत्वम्। अशिशिरोपचारहार्योऽतितीव्रः दर्पदाहज्वरोष्मा।

सततममूलमन्त्रगम्यो विषमो विषयविषास्वादमोहः।

हिन्दी भावार्थ –कष्ट है कि ऐश्वर्य से उत्पन्न कुछ दूसरे ही प्रकार का तिमिर नामक नेत्ररोग का अन्धापन होता है, जो अंजन की वर्तिका से दूर नहीं किया जा सकता। दर्प रूपी दाहकारी ज्वर की गर्मी अति तीव्र होती है, जो शीतल पदार्थों द्वारा उपचार से दूर नहीं होती। विषयभोग रूपी विष के आस्वादन से उत्पन्न मूर्च्छा विषम तथा जड़ी–बूटियों और मन्त्रों की पहुँच से परे होती है।

नित्यमस्नानशौचबाध्यः बलवान् रागमलावलेपः। अजस्रमक्षपावसानप्रबोधा घोरा च राज्यसुख–संनिपातनिद्रा भवतीति विस्तरेणाभिधीयसे।

गर्भेश्वरत्वमभिनवयौवनत्वमप्रतिमरूपत्वममानुषशक्तित्वं चेति महतीयं खल्वनर्थपरम्परा । सर्वा अविनयानामेकैकमप्येषामायतनम्, किमुत समवायः।

हिन्दी भावार्थ– सुख भोग की अभिलाषा रूपी मल का लेप इतना सघन होता है कि स्नान और शुद्धि के उपायों से समाप्त नहीं होता। राज्यसुख रूपी सन्निपात ज्वर की निद्रा निरन्तर रात्रि के समाप्त होने पर भी न टूटने वाली और घोर होती है। इस कारण आपसे विस्तार से कहा जा रहा है।

जन्म से ही राज या धनसम्पन्न होना, नयी युवावस्था, अद्वितीय रूपवान् होना और मनुष्य से बढ़कर शक्ति से युक्त होना – यह अनर्थ की बड़ी शृङ्खला है। इनमें एक–एक उद्दण्डता के घर हैं, इनके समूह की तो बात ही क्या।

यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालननिर्मलापि कालुष्यमुपयाति बुद्धिः। अनुज्झितधवलतापि सरागैव भवति यूनां दृष्टिः। अपहरति च वात्येव शुष्कपत्रं समुद्भूतरजोभ्रान्तिरतिदूरमात्मेच्छया यौवनसमये पुरुषं प्रकृतिः।

हिन्दी भावार्थ

यौवन के आरम्भ में प्रायः शास्त्ररूपी जल से धुलकर निर्मल अर्थात् अज्ञान रहित होने पर भी बुद्धि कलुषता को प्राप्त करती है। नवयुवकों की दृष्टि अपनी धवलता (अर्थात् सरलता) को न छोड़ने पर भी राग या कामुकतादि आसक्ति से युक्त होती है। जैसे धूल के बवण्डर वाली आँधी सूखे पत्ते को अपनी इच्छा से बहुत दूर उड़ा ले जाती है, वैसे ही युवावस्था में रजोगुण के भ्रम वाली प्रकृति पुरुष को अपनी इच्छा के अनुसार बहुत दूर भटका देती है।

इन्द्रियहरिणहारिणी च सतत–दुरन्ता इयमुपभोगमृगतृष्णिका। नवयौवन–कषायितात्मनश्च सलिलानीव तान्येव विषयस्वरूपाण्यास्वाद्यमानानि मधुरतराण्यापतन्ति मनसः। नाशयति च दिङ्मोह इवोन्मार्गप्रवर्तकः पुरूषमत्यासंगो विषयेषु।

हिन्दी भावार्थ

विषयभोग की यह मृगतृष्णा इन्द्रियरूपी हरिणों को दौड़ाने वाली और सतत अन्त में घोर दुःख देने वाली होती है। नयी युवावस्था के कारण जिस पुरुष का चित्त भोगासक्ति से कसैला हो जाता है, उसके मन को वे ही विषयभोग और अधिक मीठे प्रतीत होने लगते हैं जैसे (मुख कसैला होने पर) जल और मीठा लगने लगता है। विषयभोगों में अतिशय आसक्ति दिग्भ्रम के समान पुरुष को विपरीत मार्ग पर ले जाकर उसका नाश कर देती है (उसे भटका देती है)।

भवादृशा एव भवन्ति भाजनान्युपदेशानाम्। अपगतमले हि मनसि स्फटिकमणाविव रजनिकर–गभस्तयो विशन्ति सुखेनोपदेशगुणाः। गुरुवचनम मलमपि सलिलमिव महदुपजनयति श्रवणस्थितं शूलमभव्यस्य। इतरस्य तु करिण इव शङ्खाभरणमाननशोभासमुदयमधिकतरममुपजनयति। हरति च अतिमलिनमन्धकारमिव दोषजातं प्रदोषसयम निशाकर इव गुरुपदेशः ।

हिन्दी भावार्थ

आप जैसे ही उपदेश के पात्र होते हैं। जैसे धूल आदि मैल हटा देने पर स्फटिक मणि में चन्द्रमा की किरणें प्रवेश करने लगती हैं, वैसे ही कामादि विकार से रहित मन में उपदेश के गुण सुख सहित प्रभाव डालते हैं। जैसे निर्मल जल भी कान में पड़ने पर शूल उत्पन्न करता है, वैसे ही दुर्जन के लिए गुरुजन का रागद्वेषादि रहित निर्मल वचन भी कान में पड़ने पर उसका क्रोध बढ़ाता है। उससे भिन्न (भले व्यक्ति) के लिए वह मुख की शोभा को और अधिक वृद्धि प्रदान करता है जैसे शङ्ख का आभूषण हाथी के मुख की शोभा बढ़ा देता है।

गुरुपदेशः प्रशमहेतुर्वयःपरिणाम इव पलितरूपेण शिरसिजजालममलीकुर्वन् गुणरूपेण तदेव परिणमयाति। अयमेव चानास्वादितविषयरसस्य ते काल उपदेशस्य। कुसुमशरप्रहारजर्जरिते हि हृदि जलमिव गलत्युपदिष्टम्।

हिन्दी भावार्थ

और गुरुजन का उपदेश जैसे प्रदोष समय का चन्द्रमा अत्यन्त काले अन्धकार को भी दूर कर देता है, वैसे ही अतिशय निन्दित दोषों के समूह को दूर कर देता है। चित्त के विकारों के प्रशमन का कारणभूत गुरुपदेश बुद्धि में उत्पन्न विचारों को वैसे ही गुण के रूप में बदल देता है, जैसे बुढ़ापा सिर के केशों को निर्मल करते हुए उन्हें पलित या सफेदी में बदल देता है। विषयभोगों का आस्वादन न किये हुए आपके लिए तो यही

उपदेश का समय है। कामदेव के बाणों के प्रहार से छलनी हुए हृदय में उपदेश का वचन जल के समान नीचे गिरकर व्यर्थ हो जाता है।

अकारणं च भवति दुष्प्रकृतेरन्वयः श्रुतं चाविनयस्य। चन्दनप्रभवो न दहति किमनलः । किं वा प्रशमहेतुनापि न प्रचण्डतरीभवति वडवानलो वारिणा। गुरुपदेशश्च नाम पुरुषाणामखिलमल–प्रक्षालन–क्षममजलं स्नानम्, अनुपजातपलितादिवैरूप्यमजरं वृद्धत्वम्, अनारोपितमेददोषं गुरूकरणम् ।

हिन्दी भावार्थ

उच्च वंश में जन्म और शास्त्रों की शिक्षा दुष्ट स्वभाव वाले की उद्दण्डता के ऊपर कोई प्रभाव नहीं डालती। चन्दन से भी उत्पन्न अग्नि क्या जलाता नहीं है ? (अग्नि) को बुझाने के हेतु जल से भी क्या वडवानल और प्रचण्ड नहीं होता ? गुरुजन का उपदेश तो पुरुष के लिए सभी (उसके अन्तः के) कालुष्य रूपी मैल को धोने में समर्थ बिना जल का स्नान है। केश पकना आदि कुरूपता से रहित वृद्धावस्था के बिना भी वृद्धत्व है। चर्बी के दोष को बिना बढ़ाये गुरु (भारी अर्थात् गौरवशाली) बनाने की प्रक्रिया है।

असुवर्णविरचनमग्राम्यं कर्णाभरणम्, अतीतज्योतिरालोकः, नोद्वेगकरः प्रजागरः। विशेषेण तु राज्ञाम्। विरला हि तेषामुपदेष्टारः। प्रतिशब्दक इव राजवचनमनुगच्छति जनो भयात्। उद्दामदर्पश्वयथुस्थगितश्रवणविवराश्चोपदिश्यमानमपि ते न शृण्वन्ति। शृण्वन्तोऽपि च गजनिमीलितेनावधीरयन्तः खेदयन्ति हितोपदेशदायिनो गुरुन्।

हिन्दी भावार्थ

राजाओं की प्रकृति अहंकार रूपी दाहज्वर की मूर्च्छा से अज्ञान के अन्धकार से भरी हुई और व्याकुल होती है। उनके धन मिथ्या अभिमान का उन्माद उत्पन्न करते हैं। राजलक्ष्मी राज्य रूपी विष के विकार के रूप में तन्द्रा उत्पन्न करने वाली होती है। कल्याण की चाह करने वाले आप पहले लक्ष्मी को ही देखें। श्रेष्ठ वीरों की तलवार रूपी कमलों के वन में विहार करने वाली भ्रमरी रूपी लक्ष्मी क्षीरसागर से निकली है।

पारिजातपल्लवेभ्यो रागम्, इन्दुशकलादेकान्तवक्रताम्, उच्चैःश्रवसश्चञ्चलताम्, कालकूटान्मोहनशक्तिम्, मदिरायाः मदम्, कौस्तुभमणेर्नैष्ठुर्यम्, इत्येतानि सहवासपरिचयवशाद् विरहविनोदचिह्नानि गृहीत्व द्गता। न ह्येवंविधम–परिचितमिह जगति किञ्चिदस्ति यथेयमनार्या। लब्धापि खलु दुःखेन परिपाल्यते। दृढगुणसन्दाननिष्पन्दीकृतापि नश्यति।

हिन्दी भावार्थ– पारिजात के पल्लवों से राग अर्थात् अनुराग, चन्द्रलेखा से अनोखी वक्रता या कुटिलता, उच्चैःश्रवा से चञ्चलता, कालकूट विष से मोहन की, मूर्च्छित करने अर्थात् वश में करने की शक्ति, मदिरा से मद, कौस्तुभ मणि से कठोरता – इन सबको साथ रहने के परिचय के कारण विरह में मनबहलाव के चिह्नों के रूप में लेकर ही निकली है। इस संसार में इस प्रकार का दूसरा कुछ भी ऐसा अपरिचित नहीं है, जैसी यह अनार्या लक्ष्मी। मिल जाने पर भी बड़े दुःख से इसकी रक्षा हो पाती है। गुणों रूपी रस्सी से दृढ़ता से बाँध कर जकड़ दिये जाने पर भी निकल कर चली जाती है।

उद्दामदर्पभटसहस्रोल्लासितासिलता पञ्जरविधृताप्यपक्रामति। मदजल–दुर्दिनान्धकार–गज– घनघटा–परिपालितापि प्रपलायते। न परिचयं रक्षति। नाभिजनमीक्षते। न रूपमालोकयते। न कुलक्रममनुवर्तते। न शीलं

पश्यति। न वैदग्धं गणयति। न श्रुतमाकर्णयति। न धर्ममनुरुध्यते। न त्यागमाद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं पालयति।

हिन्दी भावार्थ

उत्कट अहंकार से युक्त सहस्रों वीरों द्वारा चमकायी गयी लता जैसी (लम्बी) तलवारों के पिंजरे में बन्द की गयी भी निकल कर भाग जाती है। मदजल की वृष्टि के अन्धकार में हाथियों की घनी पंक्ति द्वारा निगरानी किये जाने पर भी पलायन कर जाती है। न परिचय का निर्वाह करती है, न उच्च कुल का विचार करती है, न रूप–सौंदर्य को देखती है, न किसी एक कुल में रहने के क्रम का अनुसरण करती है, न सदाचरण को देखती है, न विदग्धता को कुछ गिनती है, न शास्त्रज्ञान को सुनती है, न धर्म का अनुरोध रखती है, न त्याग के लिए कोई आदर रखती है, विशेषज्ञता का विचार नहीं करती और न आचार का पालन करती है।

न सत्यमवबुध्यते। न लक्षणं प्रमाणीकरोति। गन्धर्वनगरलेखेव पश्यत एव नश्यति। अद्याप्यारूढमन्दर–परिवर्तावर्त–भ्रान्ति जनित–संस्कारे व परिभ्रमति। कमलिनी–सञ्चरण–व्यतिकर– लग्ननलिननालकण्टकक्षतेव न क्वचिदपि निर्भरमाबध्नाति पदम्। अतिप्रयत्नविधृतापि परमेश्वरगृहेषु विविधगन्धगजगण्डमधुपान मत्तेव परिस्खलति। पारुष्यमिवोपशिक्षितुमसिधारासु निवसति।

हिन्दी भावार्थ

यह सत्य को नहीं समझती, किसी सामुद्रिकशास्त्र के लक्षण को भी प्रमाणित नहीं करती। गन्धर्वनगर के दृश्य के समान देखते–देखते ही लुप्त हो जाती है। आज तक मानो मन्दराचल पर्वत से मथने से बने जल के आवर्त में चक्कर खाने से उत्पन्न संस्कार के कारण घूमती रहती है। कमलिनियों के मध्य घूमने के सम्पर्क से मानो कमलनालों के काँटे चुभने के कारण, कहीं भी पैरों को पूरी तरह नहीं रखती। बड़े राजाओं और धनियों के घर प्रयत्नपूर्वक सुरक्षित रखी गयी भी मानो विविध गन्धगजों के कपोलों से गिरने वाले मदजल रूपी मद के पान से मतवाली होकर इधर–उधर गिरती है।

विश्वरूपत्वमिवगृहीतुमाश्रिता नारायणमूर्त्तिम, अप्रत्ययबहुला च दिवसान्तकमलमिव समुपचितमूलदण्डकोशमण्डलमपि मुञ्चति भूभुजम्, लतेव विटपकानध्यारोहति। गङ्गेव वसुजनन्यपि तरङ्गबुद्बुद्चञ्चला।

हिन्दी भावार्थ

मानो विश्वरूपत्व पाने के लिए उसने नारायण भगवान् विष्णु के शरीर का आश्रय लिया हो, अविश्वास से भरी हुई वह मूल, दण्ड, कोश और मण्डल की पूर्ण वृद्धि प्राप्त कर लेने वाले सायंकालीन कमल के समान राज्य, सेना, खजाना और मित्र गण से सम्पन्न भी राजा को छोड़ देती है। लता जैसे विटपकों (छोटे वृक्षों) पर चढ़ती है, वैसे ही वह धूर्त विटों के स्वामियों का आश्रय लेती है। वसु नाम के देवताओं की माता और तरंगों एवं बुद्बुदों से चञ्चल गङ्गा के समान वसु अर्थात् धन को उत्पन्न करने वाली होने पर भी तरंगों और बुद्बुद् के समान चंचला है।

दिवसकरगतिरिव प्रकटित–विविध–संक्रान्तिः, पातालगुहेव तमोबहुला, हिडिम्बेव भीमसाहसैकहार्यहृदया, प्रावृडिवाचिरद्युतिकारिणी, दुष्टपिशाचीव दर्शितानेकपुरुषोच्छ्राया स्वल्पसत्त्वमुन्मत्तीकरोति। सरस्वतीपरिगृहीतमीर्ष्ययेव नालिङ्गति। जनं गुणवन्तमपवित्रमिव न स्पृशति।

हिन्दी भावार्थ

सूर्य की गति में जैसे अनेक राशियों में संक्रान्ति होती है, वैसे ही यह अनेक पुरुषों के पास जाती रहती है। पाताल की गुफा जैसे तम अर्थात् अन्धकार से भरी होती है, वैसे तमोगुण के व्यापारों से भरी होती है। जैसे हिडिम्बा का हृदय भीमसेन के साहस के कार्य से आकृष्ट था, वैसे भीषण साहस के कार्यों से आकृष्ट होने योग्य हृदयवाली है। वर्षा के समान क्षण भर चमकने वाली है। दुष्टा पिशाची जैसे अनेक पुरुषों के बराबर ऊँचाई दिखाकर दुर्बल मनुष्य को उन्मत्त बना देती है, वैसे अनेक पुरुषों को समृद्धि की दशा में पहुँचाकर उन्हें उन्मत्त बना देती है। सरस्वती द्वारा अपनाये गये पुरुष को मानो ईर्ष्या के कारण गले नहीं लगाती। गुणवान् पुरुष का अपवित्र के समान स्पर्श नहीं करती।

उदारसत्त्वममङ्गलमिव न बहु मन्यते। सुजनमनिमित्तमिव न पश्यति। अभिजातमहिमिव लङ्घयति। शूरं कण्टकमिव परिहरति। दातारं दुःस्वप्नमिव न स्मरति। विनीतं पातकिनमिव नोपसर्पति। मनस्विनमुन्मत्तमिवोपहसति। परस्परविरुद्धंचेन्द्रजालमिव दर्शयन्ति प्रकटयति जगति निजं चरितम्। तथाहि। सततम् उष्माणमारोपयन्त्यपि जाड्यमुपजनयति। उन्नतिमादधानापि नीचस्वभावतामाविष्करोति।

हिन्दी भावार्थ

उदार मन वाले को अमंगल जैसा मानती हुई आदर नहीं देती। सज्जन को अपशकुन जैसे देखती तक नहीं। उच्च कुलीन को साँप जैसा मानती हुई लाँघ जाती है। वीर से काँटे की तरह परहेज करती है। दानशील का दुःस्वप्न के समान स्मरण नहीं करती। विनम्र पुरुष के पास उसे घोर पापी जैसा मानती हुई नहीं जाती। मनस्वी का इस प्रकार उपहास करती है मानो वह पागल हो। परस्पर विरुद्ध इन्द्रजाल जैसा दिखाती हुई जगत् में यह अपना परस्पर विरोधी चरित प्रकट करती है। निरन्तर ऊष्मा (गर्मी या उत्साह) देती हुई भी जाड्य (शीतलता या जड़ता) उत्पन्न करती है।

तोयराशिसम्भवापि तृष्णां संवर्धयति। ईश्वरतां दंधानापि
अ
अमृतसहोदरापि कटुकविपाका, विग्रहवत्यपि अप्रत्यक्षदर्शना। पुरुषोत्तमरतापि खलजनप्रिया ।

हिन्दी भावार्थ

जल की राशि समुद्र से उत्पन्न होने पर भी तृष्णा को बढ़ाती है। ईश्वरता प्रदान करती हुई भी हल्कापन ले आती है। अमृत की सहोदरा होने पर भी कटु विपाक वाली होती है। विग्रह (शरीर) वाली होने पर भी प्रत्यक्ष न दिखायी देने वाली होती है। पुरुषोत्तम में रत होने पर भी खल जन से प्रेम करने वाली है।

रेणुमयीव स्वच्छमपि कलुषीकरोति। यथायथा चेयं चपला दीप्यते तथातथा दीपशिखेव कज्जलमलिनमेव कर्म केवलमुद्वमति। तथा हि। इयं संवर्धनवारिधारातृष्णाविषवल्लीनाम्, व्याधगीतिरिन्द्रियमृगाणाम्, परामर्शधूमलेखा सच्चरितचित्राणाम्, विभ्रमशय्या मोहदीर्घनिद्राणाम्, निवासजीर्णवलभी धनमदपिशाचिकानाम् ।

हिन्दी भावार्थ

धूलि से भरी हुई के समान निर्मल को भी कलुषित कर देती है। जैसे–जैसे यह चंचला प्रदीप्त होती है, वैसे–वैसे दीपक की लौ के समान केवल काजल की कालिमा जैसे

कर्म ही प्रेरित करती है। और भी। यह (धन की) तृष्णा रूपी विष की लताओं के लिए पूर्ण रूप से बढ़ाने वाली जल की धारा है। इन्द्रिय रूपी मृगों को फँसाने के लिए बहेलिए का संगीत है। सज्जनों के चरित्र रूपी चित्रों को मलिन करने वाली धूमलेखा है। मोह की लम्बी निद्रा के लिए विलास की शय्या है। धन के अहंकार रूपी पिशाचियों के लिए निवास की टूटी अटारी है।

तिमिरोद्गतिः शास्त्रदृष्टीनाम्, पुरःपताका सर्वाविनयानाम्, उत्पत्तिनिम्नगा क्रोधावेगग्राहाणाम्, आपानभूमिर्विषयमधूनाम्, संगीतशाला भ्रूविकारनाट्यानाम्, आवासदरी दोषाशीविषाणाम्, उत्सारणवेत्रलता सत्पुरुषव्यवहाराणाम्, अकालप्रावृड् गुणकलहंसकानाम्, विसर्पणभूमिर्लोकापवादविस्फोटकानाम्,

हिन्दी भावार्थ

शास्त्र रूपी दृष्टि के लिए तिमिर रोग की वृद्धि है। सभी प्रकार के अविनयों के आगे चलने वाली पताका है। क्रोधावेग रूपी ग्राहों की उत्पत्ति की नदी है। भोगपदार्थ रूपी मदिरा की मधुशाला है। भ्रूविकार रूपी अभिनय को सिखाने के लिए संगीतशाला है। (कामादि) दोष रूपी सर्पों के निवास की कन्दरा है। सत्पुरुषों के आचार को दूर करने के लिए बेंत की छड़ी है। गुणरूपी कलहंसों के लिए असमय की वर्षा ऋतु है। लोकापवाद रूपी विस्फोटक रोग के फैलने का स्थान है।

प्रस्तावना कपटनाटकस्य, कदलिका कामकरिणः, वध्यशाला साधुभावस्य, राहुजिह्वा धर्मेन्दुमण्डलस्य। न हि तं पश्यामि यो ह्यपरिचितयानया न निर्भरमुपगूढः, यो वा न विप्रलब्धः। नियतमियमालेख्यगतापि चलति, पुस्तमय्यपीन्द्रजालमाचरति, उत्कीर्णापि विप्रलभते, श्रुताप्यभिसन्धत्ते, चिन्तितापि वञ्चयति।

हिन्दी भावार्थ

कपट रूपी नाटक की प्रस्तावना है। काम रूपी हाथी के लिए केलों की पंक्ति है। सौजन्य की वध्यशाला है। धर्म रूपी चन्द्रमण्डल के लिए राहु की जिह्वा है। मैं ऐसा किसी को नहीं देखता जिसका इसने कसकर आलिंगन किया हो और जिसे फिर धोखा न दिया हो। निश्चय ही, यह चित्र में अंकित होने पर भी चल देती है, मिट्टी की मूर्ति के रूप में होने पर भी इन्द्रजाल सी माया फैलाती है, तराश कर उकेरी गयी भी धोखा देती है, सुनने पर भी ठगती है, सोचने पर भी वञ्चना करती है।

एवंविधयापि चानया दुराचारया कथमपि दैववशेन परिगृहीता विक्लवाः भवन्ति राजानः, सर्वाविनयाधिष्ठानतां च गच्छन्ति। तथाहि। अभिषेकसमय एव चैतेषां मङ्गलकलशजलैरिव प्रक्षाल्यते दाक्षिण्यम्, अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्, पुरोहितकुशाग्रसम्मार्जनीभिरिवापनीयते क्षान्तिः, उष्णीषपट्टबन्धेनेवावछाद्यते जरागमनस्मरणम्, आतपत्रमण्डलेनेवापसार्यते परलोकदर्शनम् ।

हिन्दी भावार्थ

इस प्रकार की इस दुराचारिणी द्वारा जिस किसी प्रकार भाग्यवश अपनाये गये राजा व्याकुल हो जाते हैं और सभी प्रकार की उच्छृंखलताओं के घर बना जाते हैं। और भी। अभिषेक के समय ही मानो मंगलकलशों के जल से उनकी उदारता धो दी जाती है, होमादि अग्निकार्य से हृदय मलिन बना दिये जाते हैं, पुरोहित के कुश के अग्रभाग रूपी सम्मार्जनी से क्षमाशीलता झाड़कर दूर फेंक दी जाती है, रेशमी पगड़ी के बाँधने

से वृद्धावस्था आने की स्मृति ढँक दी जाती है, छत्र के मण्डल से परलोक की दृष्टि दूर कर दी जाती है।

चामरपवनैरिवापह्रियते सत्यवादिता, वेत्रदण्डैरिवोत्सार्यन्ते गुणाः, जयशब्दकलकलैरिव तिरस्क्रियन्ते साधुवादाः, ध्वजपटपल्लवैरिव परामृश्यते यशः। तथा हि। केचिच्छ्रमवशशिथिल–शकुनिगलपुटचपलाभिः खद्योतोन्मेषमुहूर्त्तमनोहराभिः मनस्विजनगर्हिताभिः संपद्भिः प्रलोभ्यमाना धनलवलाभावलेपविस्मृतजन्मानोऽनेकदोषोपचितेन दुष्टासृजेव रागावेशेन बाध्यमानाः

हिन्दी भावार्थ

चँवरों की वायु से मानो सत्यवादिता उड़ा दी जाती है। मानो बेंत के डण्डों से गुणों को भगा दिया जाता है, मानो जय–जयकार के शब्दों के कोलाहल से हितकारी वचनों को तिरस्कृत कर दिया जाता है, ध्वज के वस्त्र की छोरों से यश को मानो पोंछ दिया जाता है। और भी। कुछ राजापरिश्रम से थके पक्षी की ग्रीवाविवर के समान चंचल, जुगनू की चमक के समान क्षण भर को मनोहर लगने वाली और मनस्वियों द्वारा निन्दित सम्पत्तियों से प्रलोभित होते हैं, धन के अल्प अंश को पाने से उत्पन्न अहंकार के कारण जन्म को भूल जाते हैं, अनेक दोषों के बढ़ जाने से दूषित रक्त के समान, काम आदि अनेक दोषों की वृद्धि के कारण भोगेच्छा की अभिलाषा के आवेश से पीडित रहते हैं।

विविधविषयग्रासलालसैः पञ्चभिरप्यनेक–सहस्रसंख्यै–रिवेन्द्रियैरायास्यमानाः, प्रकृतिचञ्चलतया लब्धप्रसरेण एकेनापि शतसहस्रतामिवोपगतेन मनसाकुलीक्रियमाणा विह्वलतामुपयान्ति। ग्रहैरिव गृह्यन्ते, भूतैरिवाभिभूयन्ते, मन्त्रैरिवावेश्यन्ते, सत्त्वैरिवाष्टभ्यन्ते,

हिन्दी भावार्थ

वे अनेक विषयों के भोग की उत्कट चाह वाली, पाँच होने पर भी कई हजार बनी हुई सी इन्द्रियों द्वारा उद्योग के लिए प्रेरित किये जाकर, स्वभाव से चञ्चल होने के कारण और अवसर पाकर एक होने पर भी सैकड़ों, हजारों जैसे बने हुए मन से व्याकुल किये जाकर छटपटाने लगते हैं। वे मानो ग्रहों द्वारा पकड़ लिये जाते हैं, भूतों द्वारा अभिभूत कर लिये जाते हैं, मन्त्रों द्वारा मानो उनमें प्रेतात्माओं का प्रवेश करा दिया जाता है, दुष्टात्माओं द्वारा मानो निश्चेष्ट बना दिये जाते हैं।

वायुनेव विडम्ब्यन्ते, पिशाचैरिव ग्रस्यन्ते, मदनशरैर्मर्माहता इव मुखभङ्गसहस्राणि कुर्वते, धनोष्मणा पच्यमाना इव विचेष्टन्ते, गाढ़ाप्रहारतहता इवाङ्गानि न धारयन्ति, कुलीरा इव तिर्यक्परिभ्रमन्ति, अधर्मभग्नगतयः पङ्गव इव परेण सञ्चार्यन्ते मृषावादविषविपाक जातमुखरोगा इवातिकृच्छ्रेण जल्पन्ति, सप्तच्छदतरव इव कुसुमरजोविकारैः आसन्नवर्तिनां शिरःशूलमुत्पादयन्ति,

हिन्दी भावार्थ

मानो वायु के द्वारा उपहासास्पद बना दिये जाते हैं, मानो पिशाचों से ग्रस लिये जाते हैं। वे कामदेव के बाणों से मर्माहत हुए के समान सहस्रों प्रकार की मुख की भंगिमाएँ दिखाते हैं, धन की गर्मी से भुने जाते हुए के समान छटपटाते हैं, गहरी मार से पीटे गये के समान अपने होश में नहीं रहते, केकड़ों के समान तिरछे चलते हैं, अधर्म के कारण (सत्कर्म में) गति भग्न हो जाने से दूसरे द्वारा चलाये जाते हैं, मिथ्या भाषण के

फल के रूप में उत्पन्न मुख के रोग वाले के समान बड़ी कठिनाई से बोलते हैं, जैसे ये राजा सप्तपर्ण वृक्ष के पुष्प–पराग की उग्र गन्ध से वैसे ही अपने नेत्रों के रजोगुणविकार से समीप रहने वालों के सिर में शूल उत्पन्न कर देते हैं,

आसन्नमृत्यव इव बन्धुजनमपि नाभिजानन्ति, उत्कम्पितलोचना इव तेजस्विनो नेक्षन्ते, कालदष्टा इव महामन्त्रैरपि न प्रतिबुध्यन्ते, जातुषाभरणानीव सोष्माणं न सहन्ते, दुष्टवारणा इव महामानस्तम्भनिश्चलीकृताः न गृह्णन्त्युपदेशम्, तृष्णाविषमूर्च्छिताः कनकमयमिव सर्वं पश्यन्ति

हिन्दी भावार्थ

मरणासन्न व्यक्तियों के समान वे अपने बन्धु–बान्धवों को नहीं पहचानते, जैसे जिनकी आँख आई हुई है, वे सूर्य आदि के तेज को नहीं देख पाते, वैसे ही वे तेजस्वी लोगों को नहीं देखते, विषैले सर्प से डँसे गये व्यक्ति जैसे बड़े प्रभावशाली मन्त्रों से भी होश में नहीं आते, वैसे ही वे बड़ों के हितकारी उपदेश से भी जागरूक नहीं होते, जैसे लाख के आभूषण ताप से युक्त (अग्नि आदि) को नहीं सहते, वैसे ही वे उत्साह सम्पन्न व्यक्ति को सहन नहीं करते हैं, जैसे बिगड़ैल हाथी बड़े भारी खम्भे में जकड़े गये भी (महावत के) सिखाने को नहीं ग्रहण करते, वैसे ही वे घोर अहंकार से जिद पर अड़े रहकर गुरुजनों के उपदेश को ग्रहण नहीं करते, तृष्णा रूपी विष से मूर्च्छित हुए वे सब कुछ स्वर्णमय सा देखते हैं।

इषव इव पानवर्धिततैक्ष्ण्याः परप्रेरिता विनाशयन्ति, दूरस्थितान्यपि फलानि दण्डविक्षेपैमहाकुलानि शातयन्ति । अकालकुसुमप्रसवा इव मनोहराकृतयोऽपि लोकविनाशहेतवः, श्मशानाग्नय इवातिरौद्रभूतयः । तैमिरिका इवादूरदर्शिनः

हिन्दी भावार्थ

जैसे शान चढ़ाने से बढ़े हुए पैनापन वाले बाण शत्रुओं द्वारा चलाये जाने पर प्राण ले लेते हैं, वैसे ही ये मदपान से और अधिक क्रूर होकर मन्त्री आदि दूसरों द्वारा उकसाये जाने पर प्राण ले लेते हैं। जैसे (वृक्ष पर) दूर पर लगे फलों को डण्डे मारकर गिरा दिया जाता है, वैसे ही ये दूर पर रहने वाले सम्भ्रान्त कुलों को भी दण्ड लगाकर या सेना भेजकर नष्ट कर देते हैं। जैसे असमय में उत्पन्न पुष्प मनोहर आकृति के होने पर भी संसार के विनाश के हेतु होते हैं, वैसे ही ये सुन्दर रूप वाले होने पर भी प्रजा के विनाश के कारण होते हैं। जैसे श्मशान के अग्नि की भूति (भस्म) अति भयावह होती है, वैसे ही इनकी भूति (समृद्धि) भयावह होती है। ये तिमिर नेत्ररोग को रोगी के समान अदूरदर्शी होते हैं।

उपसृष्टा इव क्षुद्राधिष्ठितभवनाः, श्रूयमाणा अपि प्रेतपटहा इवोद्वेजयन्ति, चिन्त्यमाना अपि महापातकाध्यवसाया इवोपद्रवमुपजनयन्ति, अनुदिवसमापूर्यमाणाः पापेनेवाध्मातमूर्त्तयो भवन्ति, तदवस्थाश्च व्यसनशतशरव्यतामुपगताः ।

हिन्दी भावार्थ

जैसे कामी पुरुषों के घर वैश्याएँ बैठी होती हैं, वैसे ही इन राजाओं के भवन में क्षुद्र जन विद्यमान रहते हैं। जैसे शवयात्रा के नगाड़े सुने जाने पर उद्वेग उत्पन्न करते हैं, वैसे इनके विषय में सुनायी पड़ने पर आतंक फैल जाता है। जैसे महापातक कर्मो के प्रयास का चिन्तन करने पर भी मन में अशान्ति उत्पन्न हो जाती है, वैसे इनके विषय में सोचने पर भी मन बेचैन हो उठता है। प्रतिदिन इनके भीतर भरते जा रहे पापों के

कारण इनके शरीर रूपी मूर्ति फूलती जाती है। ऐसी दशा वाले वे सैकड़ों दुर्व्यसनों के शिकार बनकर।

वल्मीकतृणाग्रावस्थिति जलबिन्दव इव पतितमप्यात्मानं नावगच्छन्ति। अपरे तु स्वार्थनिष्पादनपरैर्धनपिशितग्रासगृध्नैरास्थान–नलिनीबकैः द्यूतं विनोद इति, परदाराभिगमनं वैदग्ध्यमिति, मृगयां श्रम इति, पानं विलास इति, प्रमत्तता शौर्यमिति, स्वदारपरित्यागः अव्यसनितेति, गुरुवचनावधीरणम्

हिन्दी भावार्थ

बाँमी की घास के अग्र भाग पर गिरी जल की बूँदों के समान अपना पतित होना नहीं जान पाते। कुछ दूसरे राजाओं को केवल अपने स्वार्थ साधने में तत्पर, धन रूपी मांस के टुकड़े को झपटने में गृध्र जैसे तथा राजसभा रूपी कमलिनी के पीछे (शिकार के लिए) छिपे बगुलों के समान धूर्त लोग यह समझाते हैं कि जुआ तो विनोद है, परस्त्रीगमन चतुराई है, शिकार खेलना व्यायाम है, मदपान करना मनोरंजन है, असावधानी वीरता है, अपनी पत्नी का परित्याग वैराग्य है, गुरुजनों के वचन का तिरस्कार करना स्वतन्त्रता है।

**अपरप्रणेयत्वमिति, अजितभृत्यतां सुखोपसेव्यत्वमिति,
नृत्य–गीतवाद्यवेश्याभिसक्तिः रसिकतेति, महापराधानावकर्णनं महानुभावतेति,
पराभवसहत्वं क्षमेति, स्वच्छन्दतां प्रभुत्वमिति, देवावमा
बन्दिजनख्यातिः यश इति, तरलता उत्साह इति, अविशेषज्ञता अपक्षपातित्वमिति, दोषानपि**

हिन्दी भावार्थ

किसी के सिखाने–पढ़ाने पर न चलना है, सेवकों को वश में न रख पाना सुख से सेवा करने योग्य होना है, नृत्य, गीत, वाद्य और वेश्या में आसक्ति होना कलाप्रियता या रसिकता है, बड़े अपराधों के विषय में न सुनना महानुभावता है, अपमान को सह लेना क्षमा है, मनमानी करना प्रभुता है, देवता का अपमान करना महान् शक्तिशालित्व है, बन्दिजनों की स्तुति ही यश है, चंचलता उत्साह है, किसी के विषय में विशेष न जानना निष्पक्षता है, इस प्रकार दोषों को भी।

**गुणपक्षमध्यारोपयदभिरन्तः स्वयमपि विहसद्भिः
प्रतारणकुशलैर्धूर्तैरमानुषोचिताभिः स्तुतिभिः प्रतार्यमाणा वित्तमदमत्तचित्ताः
निश्चेतनतया तथैवेत्यन्त्यारोपितालीकाभिमानाः मर्त्यधर्माणोऽपि
दिव्यांशावतीर्णमिव सदैवतमिवातिमानुष आत्मानमुत्प्रेक्षमाणाः
प्रारब्धदिव्योचितचेष्टानुभावाः सर्वजनस्योपहास्यतामुपयान्ति।**

हिन्दी भावार्थ

गुणों के बीच आरोपित करने वाले और मन ही मन स्वयं उनके ऊपर हँसने वाले, ठगने में कुशल धूर्तों द्वारा मनुष्य लोक में घटित न होने योग्य स्तुतियों से वे ठगे जाते हैं और धन के मद से बौराये मन वाले वे राजा अविवेकहीन होने के कारण उन धूर्तों के कथनों को वैसा ही मानते हुए अपने में मिथ्या अभिमान भर लेते हैं, मरणशील मनुष्यों के धर्म से युक्त होने पर भी अपने को दिव्य अंश के साथ अवतार लिया हुआ दैवी स्वरूप से सम्पन्न समझकर वे देवों के समान चेष्टाएँ और महत्त्व प्रदर्शित करने लगते हैं, जिससे वे सभी लोगों के उपहास के पात्र बन जाते हैं।

आत्मविडम्बनांचानुजीविनाजनेन क्रियमाणामभिनन्दन्ति। मनसा देवताध्यारोपण–प्रतारणा सद्भूत–संभावनोपहताश्चान्तः प्रविष्टापरभुजद्वयमिवात्मबाहुयुगलं

संभावयन्ति। त्वगन्तरिततृतीयलोचनं स्वललाटमाशङ्कते। दर्शनप्रदानमप्यनुग्रहं गणयन्ति। दृष्टिपातमप्युपकारपक्षे स्थापयन्ति। संभाषणमपि संविभागमध्ये कुर्वन्ति।

हिन्दी भावार्थ

सेवकों द्वारा अपनी नकल किये जाने पर प्रसन्न होते हैं, मन ही मन देवता का अपने ऊपर आरोप किये जाने के धोखे के कारण अविद्यमान शक्तियों की संभावना करने से उनकी मति मारी जाती है और वे ऐसा समझने लगते हैं कि उनकी दोनों भुजाओं के भीतर दूसरी और दो भुजाएँ प्रविष्ट हैं। वे अपने ललाट में त्वचा के नीचे तीसरे नेत्र के छिपे होने की आशंका करने लगते हैं। किसी को दर्शन देना भी कृपा करना गिनते हैं, दृष्टि डाल देना भी उपकार करने में जोड़ते हैं। वार्तालाप कर देना धन का भाग देने जैसा समझते हैं।

आज्ञामपि वरप्रदानं मन्यन्ते। स्पर्शमपि पावनमाकलयन्ति।
मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराश्च न प्रणमन्ति देवताभ्यः, न पूजयन्ति द्विजातीन्, न मानयन्ति मान्यान् नार्चयन्त्यर्चनीयान् नाभिवादयन्त्यभिवादनार्हान्, नाभ्युत्तिष्ठन्ति गुरुन् अनर्थकायासान्तरितोपभोगसुखमित्युपहसन्ति विद्वज्जनम्
जरावैक्लव्यप्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धोपदेशम् ।

हिन्दी भावार्थ

आज्ञा देने को वर दे देने जैसा मानते हैं, स्पर्श कर लेने को पवित्र कर देने वाला समझते हैं, अपनी झूठी महत्ता के गर्व से भरे हुए वे देवों को प्रणाम नहीं करते, ब्राह्मणों की पूजा नहीं करते, सम्माननीय जनों का सम्मान नहीं करते, सत्कार करने योग्य लोगों का सत्कार नहीं करते, प्रणाम करने योग्य जनों को प्रणाम नहीं करते, गुरुओं के आने पर उनके आदर में उठते नहीं हैं। विद्वानों पर यह कहकर हँसते हैं कि व्यर्थ के (यजन, अध्ययन, अध्यापन) कार्यों में इन्होंने उपभोग के सुख को गँवा दिया और वृद्ध जनों के उपदेश को बुढ़ापे की दुर्बलता के प्रभाव से किये जाने वाले प्रलाप के रूप में देखते हैं।

आत्मप्रज्ञापरिभव इत्यसूयन्ति सचिवोपदेशाय, कुप्यन्ति हितवादिने। सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तमालपन्ति, तं पार्श्वे कुर्वन्ति, तं संवर्धयन्ति, तेन सह सुखमवतिष्ठन्ते, तस्मै ददति, तं मित्रतामुपजनयन्ति, तस्य वचनं शृण्वन्ति, तत्र वर्षन्ति, तं बहु मन्यन्ते, तमाप्ततामापादयन्ति,
योऽहर्निशमनवरतमुपरचिताञ्जलिरधिदैवतमिव विगतान्यकर्त्तव्यः स्तौति, यो वा माहात्म्यमुद्भावयति।

हिन्दी भावार्थ

अपनी बुद्धि का निरादर समझकर सचिवों के उपदेश पर कुढ़ते हैं, हितकारी वचन बोलने वाले पर कोप करते हैं, सभी प्रकार से उसी का अभिनन्दन करते हैं, उसी से बातें करते हैं, उसे ही अपने पास रखते हैं, उसी को आगे बढ़ाते हैं, उसी के साथ सुखपूर्वक रहते हैं, उसे ही देते हैं, उसी से मित्रता रखते हैं, उसी की बातें सुनते हैं, उस पर धन की वर्षा करते हैं, उसे महत्त्व देते हैं और उसे ही अपना विश्वासपात्र बना लेते हैं, जो दिन–रात निरन्तर हाथ जोड़े हुए उन्हें देवता के समान प्रदर्शित करते हुए अन्य कार्यों को छोड़कर उन्हीं की स्तुति करता है या उनकी महत्ता का बखान करता रहता है।

किं वा तेषां साम्प्रतं येषामतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घणं कौटिल्यशास्त्रं प्रमाणम्, अभिचारक्रियाः क्रूरैकप्रकृतयः पुरोधसो गुरवः, पराभिसन्धानपरा मन्त्रिण उपदेष्टारः, नरपतिसहस्रभुक्तोज्झितायां लक्ष्म्यामासक्तिः, मारणात्मकेषु शास्त्रेषु अभियोगः, सहजप्रेमार्द्रहृदयानुरक्ता भ्रातर उच्छेद्याः ।

हिन्दी भावार्थ

उन राजाओं की कौन–सी बात उचित है जिनके लिए प्रायः अतिशय कर्मों के उपदेश से ही भरे हुए कौटिल्य का अर्थशास्त्र प्रमाण है, हिंसक अभिचार क्रियाओं के कारण जिनका स्वभाव एकमात्र क्रूरता का है, ऐसे पुरोहित जिनके गुरु होते हैं, जिनको उपदेश देने वाले दूसरों को धोखा देने में ही लगे रहने वाले मन्त्री होते हैं, सहस्रों राजाओं द्वारा भोग करने के बाद छोड़ी गयी लक्ष्मी में जिनकी आसक्ति होती है, जिनका लगाव दूसरों का विनाश करने वाले शास्त्रों (या शस्त्रों) में होता है और सहज प्रेम से आर्द्र हृदय वाले अनुरक्त भाई जिनके लिए उन्मूलित किये जाने योग्य होते हैं, तो इस प्रकार की अतिशय कुटिल और कष्टकारी है।

राज्यतन्त्रेऽस्मिन् महामोहकारिणी च यौवने कुमार! तथा प्रयतेथाः यथा नोपहस्यसे जनैः, न निन्द्यसे साधुभिः, न धिक्क्रियसे गुरुभिः, नोपालम्यसे सुहृद्भिः, न शोच्यसे विद्वद्भिः। यथा च न प्रकाश्यसे विटैः, न प्रतार्यसे कुशलैः, नास्वाद्यसे भुजङ्गैः, नावलुप्यसे सेवकवृकैः, न वञ्चयसे धूर्तैः, न प्रलोभ्यसे वनिताभिः, न विडम्ब्यसे लक्ष्म्या, न नर्त्यसे मदेन, नोन्मत्तीक्रियसे मदनेन,

हिन्दी भावार्थ

सहस्रों चेष्टाओं के कारण भीषण इस राज्यतन्त्र में और घोर अविवेक रूपी अन्धकार उत्पन्न करने वाले यौवन में, कुमार! इस प्रकार प्रयत्न करना कि लोगों की हँसी के पात्र न बनो, सज्जनों द्वारा तुम्हारी निन्दा न की जाय, गुरुजन तुम्हें धिक्कारे नहीं, मित्र तुम्हें उपालम्भ न दें, विद्वानों के लिए तुम शोचनीय न बनो, और (ऐसी चेष्टा करो) जिससे विट या कामुक पुरुष तुम्हारे दोषों का प्रचार न करें, अपनी कार्यसिद्धि में कुशल पुरुष तुम्हें ठगने न पावें, लम्पट लोग तुम्हारे धन का उपभोग न करें, सेवकगण तुम्हारे धन को लूटें नहीं, धूर्त तुम्हें धोखा न दें, स्त्रियाँ तुम्हें फँसा न सकें, राजलक्ष्मी तुम्हारी मति को बौरा न दे, तुम मद अर्थात् अहंकार से नाचने न लगो, कामवासना तुम्हें पागल न बना दे,।

धीरः, पित्रा च महता यत्नेन समारोपित–संस्कारः। तरलहृदयमप्रतिबुद्धं च मदयन्ति धनानि, तथापि भवद्गुणसन्तोषो मामेवं मुखरीकृतवान्। इदमेव च पुनः पुनरभिधीयसे। विद्वांसमपि सचेतनमपि महासत्त्वमप्यभिजातमपि धीरमपि प्रयत्नवन्तमपि पुरुषमियं दुर्विनीता खलीकरोति लक्ष्मीरिति। सर्वथा कल्याणैः पित्रा क्रियमाणम् ।

हिन्दी भावार्थ

विषयसुख तुम्हें कुमार्ग में न ले जाये, आसक्ति तुम्हें पतन में न डाले, सुख तुम्हें कर्त्तव्य से दूर न कर दे। निश्चय ही, आप स्वभाव से ही धैर्यवान् हैं और पिता ने भी बड़े यत्न से आपमें संस्कार डाले हैं। चञ्चल हृदय वाले और बोधरहित को ही धन अहंकार से पागल बना देते हैं, फिर भी आपके गुणों को देखकर उपजे सन्तोष ने मुझे यह सब कहने के लिए प्रेरित किया है। यही मैं आपसे बार–बार कह रहा हूँ। विद्वान् को भी, प्रबुद्ध को भी, महान् शक्तिशाली या मनस्वी को भी, उच्च कुल में उत्पन्न व्यक्ति को भी,

धैर्यवान् को भी और (अपनी समुन्नति के) प्रयत्न में लगे रहने वाले पुरुष को भी यह दुष्टा लक्ष्मी दुष्ट बना देती है। सभी प्रकार से पिता द्वारा मंगलाचारों के साथ किये जाने वाले।

अनुभवतु भवान् नवयौवराज्याभिषेकमङ्गलम्। कुलक्रमागतामुद्वह पूर्वपुरुषैरूढ़ां धुरम्। अवनमय द्विषतां शिरांसि। उन्नमय स्वबन्धुवर्गम्। अभिषेकानन्तरम् च प्रारब्धदिग्विजयः परिभ्रमन् विजितामपि तव पित्रा सप्तद्वीपभूषणां पुनर्विजयस्व वसुन्धराम्। अयं च ते कालः प्रतापमारोपयितुम्।

हिन्दी भावार्थ

नये युवराज पद पर अभिषेक के मंगल का आनन्द प्राप्त कीजिए। कुल परम्परा से चली आयी हुई और अपने पूर्वजों द्वारा धारण किए गए राज्य के भार को वहन कीजिए। शत्रुओं के सिरों को झुका दीजिए, अपने बन्धुओं के समूह का उत्थान कीजिए और अभिषेक के बाद दिग्विजय प्रारम्भ कर चारों ओर भ्रमण करते हुए अपने पिता द्वारा जीती गयी भी सात द्वीपों के अलंकार वाली इस धनधान्य सम्पन्ना पृथ्वी को फिर से अपने अधीन कीजिए। यही आपके लिए (सर्वोत्तम) समय है अपने प्रताप को प्रतिष्ठित करने का।

आरूढप्रतापो राजा त्रैलोक्यदर्शीव सिद्धादेशो भवति, इत्येतावदभिधायोपशशाम।

उपशान्तवचसि शुकनासे चन्द्रापीडस्ताभि–रमलाभिरुपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, उन्मीलित इव, स्वच्छीकृत इव, निर्मृष्ट इव, अभिषिक्त इव, अभिलिप्त इव, अलङ्कृत इव, पवित्रीकृत इव, उद्भासित इव, प्रीतहृदयों मुहूर्त्तं स्थित्वा स्वभवनम् आजगाम।

हिन्दी भावार्थ

शुकनास के अपना कथन समाप्त कर देने पर चन्द्रापीड ने उन उपदेश के निर्मल वचनों से ऐसा अनुभव किया मानो उसे धोया गया हो, मानो वह खिल उठा हो, मानो उसे स्वच्छ कर दिया गया हो, मानो पोंछ दिया गया हो, मानो स्नान कराया गया हो, मानो लेप किया गया हो, मानो आभूषणों से सजा दिया गया हो, मानो पवित्र कर दिया गया हो, मानो चमक ला दी गयी हो। इस प्रकार मन ही मन आनन्दित वह कुछ देर रुककर अपने भवन को लौट आया।

20.3 सारांश

इस इकाई में (संस्कृत अनुच्छेद का हिन्दी में अनुवाद कादम्बरी के शुकनासोपदेश में)) राजा तारापीड के सुयोग्य और विद्वान प्रधानामात्य थे शुकनास। यौवराज्याभिषेक की तिथि निर्धारित हो जाने पर एक दिन राजकुमार चन्द्रापीड शुकनास से मिलने जाता है। शुकनास चन्द्रापीड को राजलक्ष्मी की चंचलता और उसके अनेक दोषों का कारण बताते हुए एवं युवावस्था के विकारों का उल्लेख करते हुए चन्द्रापीड को सावधान रहकर आत्मनियन्त्रण एवं सतर्कता बरतने का उपदेश देते हैं, जो संक्षेप इस प्रकार है।

नयी युवावस्था का स्वभाव नयी युवावस्था स्वभावतः प्रबल अविवेक रूपी अज्ञान को उत्पन्न करती है, जो सूर्य की किरणों से दूर नहीं हो पाता, रत्नों के प्रकाश से कटता नहीं और प्रदीपों की ज्योति से भगाया नहीं जा सकता। लक्ष्मी की प्राप्ति से मनुष्य में जो अहंकार उत्पन्न हो जाता है वह ऐसा नशा है जो उतरता नहीं। दर्प के दाह का ज्वर शीतल पदार्थों के उपचार से दूर होने वाला नहीं होता।एक बार जब मन में

विकार उत्पन्न हो जाता है तो वे ही विषयसुख और मधुर प्रतीत होने लगते हैं और परिणाम यह होता है कि पुरुष भटक कर नष्ट हो जाता है।

गुरूपदेश का महत्त्व– जिसके मन में विकार नहीं समाया हुआ है, उसी की बुद्धि में गुरुजनों के उपदेश प्रवेश करते हैं। इसके विपरीत जो स्वभावतः दुष्ट है उसके लिए तो गुरुजनों के वचन कानों में शूल जैसे कष्टदायी प्रतीत होते हैं।

लक्ष्मी की चंचलताका स्वभाव – लक्ष्मी किसके पास पहुँच जाय, इसका ठिकाना नहीं। यह परिचय, कुलपरम्परा, शील, विदग्धता, शास्त्रज्ञान, धर्म, त्याग, विशेषज्ञता, आचार और सत्यशीलता का विचार नहीं करती। देखते–देखते गायब हो जाती है। क्रूर और साहस के कर्म करने वालों के अधीन हो जाती है। शक्तिशाली राजा को भी क्षण भर में छोड़ देती है। सरस्वती के भक्तों से तो ईर्ष्या ही रखती है। गर्व से चूर ये राजा किसी को दर्शन देना भी कृपा करना दृष्टिपात करना, उपकार, वार्तालाप कर लेना, धन का दान देना तथा किसी को आज्ञा देना वरदान देना समझते हैं। वे अहंकार से देवों और गुरुजनों का सम्मान नहीं करते, किसी की बात नहीं सुनते। वे धूर्तों और चापलूसों को ही अपने समीप रखते हैं, उन्हीं को लाभ पहुँचाते हैं और उन्हीं को प्रमाण मान लेते हैं, जो सभी कार्यों को छोड़कर उनकी स्तुति में लगा रहता है।

शब्दावली

शब्द	अर्थ
एकेन अपि	एक होकर भी।
शतसहस्रताम् उपगतेन इव	मानो सौ हजार बने हुए।
आकुलीक्रियमाणा	आकुल बनाये जाते हुए।
विह्वलताम् उपयान्ति	छटपटाने लगते हैं।
भूतैः इव अभिभूयन्ते	मानो भूतों द्वारा अभिभूत कर लिये जाते हैं।
मन्त्रैः इव आवेश्यन्ते	मानो मन्त्रों द्वारा आवेश में पहुँचा दिये जाते हैं।
अवष्टभ्यन्ते	निश्चेष्ट कर दिये जाते हैं।
चन्द्रापीडः	राजकुमार चन्द्रापीड
प्रक्षालितः इव	मानो धुले हुए
स्वच्छीकृतः इव	स्वच्छ बना दिये गये के समान।
निर्मृष्टः इव	पोंछा गया–सा, माँजा गया–सा।
अभिषिक्तः इव	नहलाया गया–सा।
अभिलिप्त इव	मानो लेप कर दिया गया हो।
पवित्रीकृत इव	मानों पवित्र कर दिया गया हो,
उद्भासितः इव	चमकले हुए
मुहुर्त्तम् स्थित्वा	कुछ देर रुककर।
स्वभवनम् आजगाम	अपने भवन को लौट आया।

20.4 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कादम्बरी ,बाणभट्ट ,चौखम्बा संस्कृत , भारती वाराणसी

2. संस्कृत साहित्य का इतिहास . बलदेव उपाध्याय , शारदा निकेतन , वाराणसी

20.5 अभ्यास प्रश्न

1 किस मन वाले को अमंगल जैसा मानती हुई आदर नहीं देती है?

2 किससे सम्पन्न पुरुष के कामोपभोग के विलास बढ़ जाते हैं?

3 किसके समान वे अपने बन्धु–बान्धवों को नहीं पहचानते है?

4 किस कुलों को दण्ड लगाकर या सेना भेजकर नष्ट कर देते हैं?

5 आपके गुणों को देखकर उपजे सन्तोष ने मुझे यह सब कहने के लिए प्रेरित किया है यह किसने कहा?

6 चन्द्रापीड के विषय में परिचय दीजिये।

ख. बहुविकल्पीय प्रश्न

1. कादम्बरी के लेखक है–

   क – पाणिनि　　ख –बाणभट्ट

   ग – भर्तृहरि　　घ – कात्यायन

2. किससे काँटे की तरह परहेज करती है–

   क – पाणिनि से　　ख – अम्बिकादत्त व्यास से

   ग – वीर से　　घ – कात्यायन से

3. किसके द्वारा उपहासास्पद बना दिये जाते है–

   क – वायु　　ख – मन

   ग – जल　　घ – गन्ध

4. शुकनास के अपना कथन समाप्त कर देने पर चन्द्रापीड कहा चला गया –

   क – वन　　ख –महल

   ग – विद्यालय　　घ –ग्राम

5. तिमिर किस रोगी के समान अदूरदर्शी होते हैं–

   क – नेत्र रोगी　　ख – कर्ण रोगी

   ग – उदर रोगी　　घ – पैर रोगी